Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

काव्यशास्त्र में काव्यस्वरूपविमर्श

साधना पाल
भोधच्छात्र,
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज।

शोधसार

शोध आलेख सार : काव्य' पद यदि पुल्लिङ्ग में प्रयुक्त होता हैए तब यह पद उशना का वाचक होता है और जब नपुंसकलिङ्ग में लिखा जाता है तो वह कवि के भाव या कर्म अर्थात् काव्य का बोधक होता है। काव्य.स्वरूप विवेचन में प्रशस्त आचार्यों के मतों में वाक्' को ही काव्य का अधिकरण माना गया है। अतः आचार्य जयदेव ने अपने चन्द्रालोक' में वाक्' को ही काव्य माना है। महाकवि कालिदास भी वागर्थ की प्रतिपत्ति के लिए वागर्थ की सम्पृक्ति स्वीकार करते हैं।

मुख्य शब्द. वाक्, काव्य, प्रशस्त, कालिदास, कवि।

कवि' और 'काव्य' भाब्द वैदिक वाङ्मय से ही प्राप्त होते हैं। जैसा कि युजर्वेद में कहा गया है–**'त्रयी विद्या काव्यं छन्दः।'**[1] और भातपथ ब्राह्मण में–**'कवेः परमात्मन इदं काव्यं वेदत्रयी रूपं छन्दः।** वेदों में कुछ स्थानों पर काव्य का प्रयोग 'पराक्रम' के अर्थ में किया गया है। यथा–**'प य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति।'**[2] इस वेदवाक्य का अर्थ वस्तुतः प य (देखो), देवस्य (इन्द्रस्य), काव्यम् (पराक्रमं), न ममार न जीर्यति (जो न समाप्त होता है, न जीर्ण होता है)।–यह है, किन्तु कुछ विद्वान् सामान्य कवि की रचना की स्थिति की दृश्टि से इसको उद्धृत करते हैं। अमरको ा में कवि के पर्याय के रूप में–

विद्वान् विपश्चिद्दोषज्ञः सन् सुधीः कोविदो बुधः।

धीरो मनीशी ज्ञः प्राज्ञः सङ्ख्यावान् पण्डितः कविः।।[3]

–ऐसा कहा गया है। इस प्रकार लौकिक संस्कृत भाशा में रचनाकार को कवि कहा गया है और **'कवेर्भावः कर्म वा काव्यम्'**– इस व्युत्पत्ति के अनुसार कवि के भाव या कर्म को काव्य कहा जाता है। ऋग्वेद में **'मधुमद्वचोऽ ंसीत् काव्यः कविः'**[4] कहा गया है। यहाँ कवि पुत्र 'उ ाना' (ुक्राचार्य) को 'काव्यः' द्वारा संकेतित किया गया है। 'काव्य' पद यदि पुल्लिङ्ग में प्रयुक्त होता है, तब यह पद उ ाना का वाचक होता है और जब नपुंसकलिङ्ग में लिखा जाता है, तो वह कवि के भाव या कर्म अर्थात् काव्य का बोधक होता है।

काव्य–स्वरूप निरूपण में उसके अधिकरण का उल्लेख भी आव यक होता है। अधिकरण कारक का प्रयोग करते हुए **आचार्य वामन** ने **काव्यालङ्कार** सूत्र में काव्य का स्वरूप इस प्रकार बताया है–

'काव्यभाब्दोऽयं गुणालङ्.कारसंस्कृतयोः भाब्दार्थयोर्वर्तते।[5]

इस प्रकार वामन के मत में गुण और अलंकार से संस्कृत भाब्दार्थ में काव्य रहता है, किन्तु वाग्देवतावतार आचार्य मम्मट 'वाक्' (भारती) को काव्य का अधिकरण मानते हैं। जैसा कि काव्यप्रका ा की प्रथम मंगलाचरण वाली कारिका में उन्होंने अपना मत व्यक्त किया है–

नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम्।
नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति।।[6]

इस कारिका में भारती का वि ोशण (आदधती) इस तथ्य को आरेखित करता है कि वाक् (भारती) नियतिकृत नियमों से रहित, एकमात्र आह्लाद प्रदान करने वाली, किसी अन्य से परतन्त्र न होने वाली, नवरसरुचिरा, निर्मिति (रचना) को धारण करने वाली भारती है, जिसको सर्वोत्कृश्ट मानते हुए वे 'जयति' का प्रयोग कर उसके प्रति प्रणति निवेदन करते हैं।

वाग्देवतावतार कहकर विद्वानों ने मम्मट को अत्यन्त आदर प्रदान किया है। उन्होंने विधाता की रचना से श्रेश्ठ तथा सर्वतन्त्र, स्वतंत्र और नवरसरुचिरा रचना को धारण करने वाली काव्य–भारती की श्रेश्ठता प्रतिपादित की है तथा सरस्वती के प्रति आदर व्यक्त किया है। वाक् के पर्याय हैं–

ब्राह्मी तु भारती भाशा गीर्वाग्वाणी सरस्वती।
व्याहार उक्तिर्लपितंभाशितं वचनं वचः।।[7]

तात्पर्य यह है कि आचार्य मम्मट ने काव्य का अधिकरण भारती अर्थात् 'वाक्' को माना है। प्र न यह उठता है कि उनके काव्यलक्षण के रूप में प्रसिद्ध **''तददोशौ भाब्दार्थौ सगुणावनऽलङ्.कृती पुनः क्वापि**[8] –में भाब्दार्थौ का प्रयोग क्यों किया गया है? ध्यातव्य है कि मम्मट के पूर्व आचार्य वामन ने काव्य का अधिकरण भाब्दार्थ को बताया है, जो इस प्रकार है–

'काव्यभाब्दोऽयं गुणालङ्.कारसंस्कृतयोः भाब्दार्थयोर्वर्तते।'

इसमें वामन ने काव्य 'भाब्दोऽयम्' से प्रारम्भ किया है और उसे बताया है कि यह गुण और अलंकार से संस्कृत भाब्दार्थ में रहता है। ऐसा प्रतीत होता है कि वामन ने 'काव्य ाब्दोऽयम् में ' ाब्द' पद का प्रयोग वाक् के अर्थ में किया है। क्योंकि छान्दोग्योपनिशद् में ' ाब्द' को 'वाक्' कहा गया है–**'यः क चन भाब्दः' स वागेव।'**[9] किन्तु मम्मट ने प्रयोजन कारिका के वाक्यां ा **'सद्यःपरिनिवृतये**.....[10] की व्याख्या में 'भाब्दार्थयोर्गुणभावेन रसाङ्.गभूतव्यापारप्रवणतया विलक्षणं यत्काव्यं लोकोत्तरवर्णनानिपुणं कविकर्म।'–ऐसा कह कर गुणालङ्.कार से संस्कृत भाब्दार्थ के गौण होने पर ही काव्य की सत्ता स्वीकार की है, क्योंकि सामान्य वाग्व्यवहार भी गुण और अलंकार से युक्त हो सकता है, जिसमें काव्यत्व नहीं होता। काव्य होने के लिए लोकोत्तराह्लाद का होना आव यक है।

प्रो0 रहसविहारी द्विवेदी के नवीन ग्रन्थ **'काव्याधिकरणानुभूतिविम ि:'** में एक उन्हीं का भलोक उद्धृत है–

व्योमाभे संस्तरे ह्यस्मिन् भाुभ्रां ुकविधुर्भवान्।
आस्यतामद्य सौभाग्याद् द िनं श्रीमतोऽभवत्।।[11]

(अर्थात् आका ासदृ ा इस नीली चादर पर धवल वस्त्र पहने आप चन्द्रमा की तरह विराजमान हो जायें, बड़े सौभाग्य से आपका द र्ान हुआ है)–इस भलोक में अलङ्.कार, वैदर्भीरीति और मित्रविशयक रति है तथापि लौकिक व्यवहार का वाक्य होने से यह काव्य नहीं हो सकता।

इसी प्रकार पण्डितराज जगन्नाथ ने–

ब्राह्मण! पुत्रस्तेजातः।[12]

–कन्या ते गर्भिणी जाता। –ऐसा कहा है। इस वाक्यको सुनकर जो सुख या दुःख होता है, वह काव्य नहीं है। काव्य में लोकोत्तर आह्लाद का होना आव यक है। भाब्दार्थों के गौण होने पर ही लोकोत्तर आह्लाद प्राप्त होता है। इसीलिए वैदिक ऋशि के पूर्व उद्धृत कथन में 'मधुमद्वचोऽ ांसीत् काव्यः कविः' कहा है। ऋग्वेद के इस मन्त्रां ा में 'वाक्' का ही काव्यत्व स्वीकार किया गया है। अर्थात् मधुमती वाणी को काव्य कहा गया है। आनन्दवर्धन ने भी 'ध्वन्यालोक' में–'वाक्' (सरस्वती) को काव्य का अधिकरण स्वीकार किया है–

सरस्वती स्वादुतदर्थवस्तु निश्यन्दमाना महतां कवीनाम्।
अलोकसामान्यमभिव्यनक्ति परिस्फुरन्तं प्रतिभा वि ोशम्।।[13]

यहाँ 'वाक्' को ही काव्य स्वीकार किया गया है। काव्य ाास्त्र के पितामह भामह ने भी अनेक बार काव्य के पर्याय के रूप में 'वाक्' भाब्द का प्रयोग करके उसका (वाक् का) अधिकरणत्व स्वीकार किया है। उनके काव्य का लक्षण है–

वक्राभिधेय ाब्दोक्तिरिश्टावाचामलङ्कृतिः'[14] जिसमें 'वाचामलङ्.कृतिः' कहकर वे 'वाक्' को ही काव्य कहते है। भामह के काव्यलक्षण में सर्वत्र उद्धृत 'भाब्दार्थौ सहितौ काव्यम्' उनका काव्य लक्षण नहीं है। वह ' ाब्दालंकार और अर्थालांकार दोनों ही सम्मिलित रूप से काव्य हैं, इसके लिए कहा है। यह वाक्य भाब्दालंकार और अर्थालंकारवादियों के समाधान में कहा गया भामह का वाक्य है। आचार्य पण्डितराज जगन्नाथ ने इसी का अनुकरण करके अपना काव्य लक्षण प्रस्तुत किया हैं–

'रमणीयार्थप्रतिपादकः भाब्दः काव्यम्।'[15]

भाब्द भेद से वही बात भामह ने भी कही है–

भामह – वक्र + अभिधेय+ भाब्दोक्तिरिश्टावाचामलङ्.कृतिः।

जगन्नाथ – रमणीय +अर्थ + प्रतिपादकः ाब्दः काव्यम्।

वक्र का अर्थ भामह करते हैं–

निमित्ततो वचो यत्तु लोकातिक्रान्तगोचरम्।
मन्यन्तेऽति ायोक्तिं तामलङ्.कारतया तथा।

सैशा सर्वैव वक्रोक्तिरनयार्थो विभाव्यते।
यत्नोऽस्यां कविनाकार्यो कोऽलङ्.कारोऽनया विना।।[16]

पण्डितराज जगन्नाथ 'रमणीय' का अर्थ करते हैं–**'रमणीयता च लोकोत्तराह्लादजनक ज्ञानगोचरता।**[17]

इस प्रकार लोकोत्तराह्लाद् का काव्य में होना दोनों आचार्य स्वीकार करते हैं।
आचार्य जयदेव ने काव्यलक्षण देते हुए कहा है कि–

निर्दोशा लक्षणवती सरीतिर्गुणभूशिता।
सालङ्.काररसानेकवृत्तिर्भाक् काव्य ाब्दभाक्।।[18]

वस्तुतः अन्तर अधिकरण में है। बहुत संभव है पण्डितराज जगन्नाथ ने 'रमणीयार्थप्रतिपादकः भाब्दः काव्यम्' में भाब्द का प्रयोग वाक् के अर्थ में ही किया है क्योंकि छान्दोग्योपनिशद् में कहा गया है–'यः क चन भाब्दः सः वागेव। महाकवि कालिदास अनुभूतिविशयक पद्य में कहते हैं–

रम्याणि वीक्ष्य मधुराँ च नि ाम्य भाब्दान्।
पर्युत्सुकी भवति यत्सुखितोऽपि जन्तुः।
तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वं,
भावस्थिराणि जननान्तरसौह्रदानि।।[19]

इसमें चेतसा स्मरण का उल्लेख है। वाक् के चार भेद–परा, प यन्ती, मध्यमा तथा बैखरी हैं। वस्तुतः उन्मेश और अनुभूति अर्थात् चेतसा स्मरण में नि चत ही परा और प यन्ती का योगदान रहता है। अतः मम्मट ने भारती (वाक्) को ही काव्य का अधिकरण माना है। वर्तमान आचार्य प्रो0 रहसविहारी द्विवेदी ने अपने ग्रन्थ 'काव्याधिकरणानुभूतिविम ः' में अनेक तर्कों के साथ 'वाक्' को ही काव्य का अधिकरण स्वीकार किया है। उनका काव्य ाास्त्र पर स्वतंत्र ग्रन्थ 'नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा' है, उसमें काव्य लक्षण इस प्रकार है–

लोकोत्तरेह्रदाह्लादे लोकोद्बोधे च सङ्.गता।
प्रज्ञावतः कवेः सद्वाक् काव्यमित्यभिधीयते।।[20]

अर्थात् लोकोत्तर ह्रदयाह्लाद्, लोक को प्रेरित करने में समर्थ प्रतिभा ाली कवि की सद्वाक् काव्य कही जाती है।

उक्त निरूपण से यह निश्कर्श निकलता है कि ऋग्वेद के अश्टम मण्डल में प्रतिपादित 'मधुमद्वचोऽ ांसीत् काव्यः कविः' के अनुसार मधुमती (आह्लादक) वाणी काव्य है। इस सूक्त में कवि ने अ वनौ को प्रेरणा देने के लिए

आह्लादक (मधुरवाणी) का प्रयोग किया है। भारतीय परम्परा में वेदों में व्यक्त विचारों को महत्त्वपूर्ण माना गया है। उक्त काव्य–स्वरूप विवेचन में प्र ास्त आचार्यों के मतों में 'वाक्' को ही काव्य का अधिकरण माना गया है। अतः आचार्य जयदेव ने अपने 'चन्द्रालोक' में 'वाक्' को ही काव्य माना है। महाकवि कालिदास भी वागर्थ की प्रतिपत्ति के लिए वागर्थ की सम्पृक्ति स्वीकार करते हैं। 'वाक्' कहने से मात्र मानव वाणी का बोध होता है। भाब्द, अर्थ और पद आदि भाब्द अनेकार्थी हैं। अतः वाक् को काव्य मानने में अतिव्याप्ति दोश आदि नहीं दिखाई देते है। अतः 'लोकोत्तराह्लादिका–वाक्' को ही 'काव्य' मानना उचित प्रतीत होता है।

संदर्भ–

1. यजुर्वेद – 14.4
2. अथर्ववेद – 10.8.32
3. अमरको ा – 2.7.5.2.7
4. ऋग्वेद – 8.8.11
5. काव्यालङ्.कारसूत्र – 1.1.1–वृत्तिभाग
6. काव्यप्रका ा – 1.1
7. अमरको ा – 1.6.1.1.5
8. काव्यप्रका ा – 1.4
9 छान्दोग्योपनिशद् – 1.1.5.6
10. काव्यप्रका ा – 1.2
11. काव्याधिकरणानुभूतिविम ाः– पृश्ठ–5
12. रसगङ्.गाधर – 1.1–वृत्तिभाग
13. ध्वन्यालोक – 1.6
14. काव्यालंकार – 1.36
15. रसगङ्.गाधर – 1.1
16. काव्यालङ्.कार – 2.81–85
17. रसगङ्.गाधर – 1.1 वृत्तिभाग
18. चन्द्रालोक – 1.7
19. अभिज्ञान ाकुन्तलम् – 5.2
20. नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा – पृश्ठ–111